प्रतिवेद्य

भारत के सर्वोच्च न्यायालय में

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार

दीवानी अपील संख्या 4448 वर्ष 2021

(एसएलपी (सी) संख्या 29868 वर्ष 2018 से उत्पन्न)

श्री सौरव जैन और एक अन्य ... अपीलार्थीगण

बनाम

मैसर्स एबीपी डिजाइन और एक अन्य ... प्रत्यर्थीगण

निर्णय

माननीय न्यायमूर्ति डॉ धनंजय वाई चंद्रचूड़

1. यह अपील दीवानी प्रक्रिया संहिता 1908 ("**सीपीसी**") की धारा 96 के तहत पहली अपील[1] में उच्च न्यायालय, इलाहाबाद के 22 फरवरी 2018 के एक निर्णय से उत्पन्न होती है। 18 अक्टूबर 2011 को, अपर जिला और सत्र न्यायाधीश, मुरादाबाद ने प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा संस्थित वाद[2] को खारिज कर दिया। उच्च

1. प्रथम अपील संख्या 411/2011.

2. मूल वाद संख्या 602/2008.

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बंधित प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

न्यायालय ने प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा दायर अपील को अनुमति प्रदान की और विचारण न्यायालय के निर्णय को यह अभिनिर्धारित करते हुए उलट दिया कि विवादित भूमि के संबंध में मुरादाबाद विकास प्राधिकरण ("**एमडीए**") द्वारा की गई नीलामी अकृत और शून्य है। अपीलकर्ता एक नीलामी क्रेता है जिसने एमडीए से वादग्रस्त भूमि खरीदी थी। एमडीए को इन कार्यवाहियों में दूसरे प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार बनाया गया है। अपीलकर्ता और दूसरे प्रत्यर्थी दोनों को भूमि पर पहली प्रत्यर्थी के कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोक दिया गया है।

तथ्य

2. पहले प्रत्यर्थी ने दीवानी न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन), मुरादाबाद के न्यायालय में एक वाद संस्थित किया, जिसमें दावा किया गया कि वह गाटा संख्या 200/1 की भूमि का एक 'हस्तांतरणीय मालिक और कृषक' है, जो मुरादाबाद जिले में ग्राम सोनकपुर में स्थित 1295.04 वर्ग या 0.1300 हेक्टेयर है। एमडीए को पहले प्रतिवादी के रूप में जबकि अपीलकर्ता को दूसरे प्रतिवादी के रूप में वाद में पक्षकार बनाया गया था। वादपत्र में प्रकथनों को इस चरण में प्रकथित किए जाना आवश्यक है। ज़ाहिद हुसैन नाम के एक व्यक्ति के पास मुरादाबाद में 6960.84 वर्ग मीटर की खाली भूमि पर स्वत्व था।उसके खिलाफ सक्षम प्राधिकारी, शहरी भूमि सीमा, मुरादाबाद के न्यायालय में सीलिंग वाद सं. 437/5325 (शीर्षक राज्य बनाम जाहिद हुसैन) संस्थित की गयी थी, जिसमें गाटा संख्या 200 की 1295.04 वर्ग मीटर भूमि शामिल थी। 16 मार्च 1988 के एक आदेश द्वारा, भूमि के अन्य खण्ड़ों के मध्य, गाटा संख्या 200 में शामिल भूमि को शहरी भूमि (अधिकत्तम सीमा और विनियमन) अधिनियम 1976 ("यूएलसीआरए") के तहत सक्षम प्राधिकारी द्वारा "अधिशेष" घोषित किया गया

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

था। सक्षम प्राधिकारी के आदेश के अनुसरण में, गाटा संख्या 200 में भूमि का कब्जा कथित रूप से उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा एमडीए को सौंप दिया गया था। इस बीच, ज़ाहिद हुसैन ने 16 मार्च 1988 के आदेश के खिलाफ जिला न्यायाधीश, मुरादाबाद के समक्ष राजस्व अपील[3] दायर की। 6 जनवरी 1993 के एक आदेश द्वारा, जिला न्यायाधीश ने अपील को अनुमति दी और एक संशोधित मास्टर प्लान के आधार पर सक्षम प्राधिकारी को फिर से विचार के लिए कार्यवाही को प्रतिप्रेषित कर दिया।

3. वादी का मामला यह है कि ज़ाहिद हुसैन की गाटा संख्या 200 की 0.32 एकड़ भूमि का पूर्व मालिक और कब्जेदार था। उपरोक्त जोत में से , भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 के प्रावधानों के तहत 30 जनवरी 1986 को एमडीए द्वारा 0.05 एकड़ (0.0200 हेक्टेयर या 200 वर्ग मीटर के बराबर) भूमि का अधिग्रहण किया गया था। अधिग्रहण के बाद, गाटा संख्या 200 को दो भूखंडों में विभाजित किया गया थाः

- गाटा संख्या 200/1 में 0.1300 हेक्टेयर (1300 वर्ग मीटर)।
- गाटा संख्या 200/2 में 0.2000 हेक्टेयर (200 वर्ग मीटर)।

जाहिद हुसैन को गाटा संख्या 200/1 का मालिक बताया गया है, जबकि एमडीए गाटा संख्या 200/2 का मालिक बन गया है। मुकदमे में वादी का मामला यह है कि सीलिंग मामले को सक्षम प्राधिकारी को प्रतिप्रेषित कर दिए जाने के बाद और इसके लम्बन के दौरान, ज़ाहिद हुसैन ने 5 मई 1993 को नियत प्राधिकरण, शहरी भूमि अधिकत्तम सीमा, मुरादाबाद के कार्यालय से पहले प्रत्यर्थी को गाटा संख्या 200/1 में स्थित भूमि बेचने की अनुमति प्राप्त की।

---

3. राजस्व अपील संख्या 23/1988.

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

पहले प्रत्यर्थी ने दावा किया कि 22 जून 1993 को एक पंजीकृत बिक्री विलेख द्वारा जाहिद हुसैन से गाटा संख्या 200/1 की 1295.04 वर्ग मीटर भूमि खरीदी। सक्षम प्राधिकारी के समक्ष सीलिंग मामले के लम्बित रहने के दौरान, यूएलसीआरए को 1999 के अधिनियम 15 ("**निरसन अधिनियम**") द्वारा निरसित कर दिया गया। सक्षम प्राधिकारी (शहरी भूमि सीमा), मुरादाबाद ने निरसन अधिनियम की धारा 4 के मद्देनजर वाद संख्या 437/5325 को खारिज करते हुए 15 जून 2001 को एक आदेश पारित किया जिसमें कहा गया है कि किसी न्यायालय, अधिकरण, या प्राधिकरण के समक्ष लंबित कार्यवाही समाप्त हो जाएगी।

4. इस तरीके से, यह अभिकथित किया गया था कि गाटा संख्या 200/1 के 1295.04 वर्ग मीटर भूमि पर अधिकत्तम सीमा को हटा दिया गया था। वादी– पहले प्रत्यर्थी ने 1295.04 वर्ग मीटर के पूरे क्षेत्र का मालिक होने का दावा किया, जबकि एमडीए 200 वर्ग मीटर भूमि के संबंध में गाटा संख्या 200/2 पर स्वामित्व अधिकारों का हकदार था।

5. एमडीए ने गाटा संख्या 200 में 600 वर्ग मीटर भूमि की नीलामी और बिक्री के लिए 31 अगस्त 2008 को एक नोटिस प्रकाशित किया। पहले प्रत्यर्थी ने नीलामी के खिलाफ 2 सितंबर 2008 और 4 सितंबर 2008 को अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का दावा किया है। पहले प्रत्यर्थी ने नीलामी को चुनौती देते हुए उत्तर प्रदेश राज्य और एमडीए के खिलाफ उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की। 11 सितंबर 2008 के एक आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने दीवानी मुकदमे में राहत पाने के लिए पहले प्रत्यर्थी को स्वतंत्रता देते हुए याचिका को निस्तारित किया। नीलामी की बिक्री को 12 सितंबर 2008 को अपीलार्थी के पक्ष में अनुमोदित किया गया था और 20 मार्च 2009 को एमडीए और

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

अपीलकर्ता के बीच 65,75,000 रूपये प्रतिफल पर विक्रय विलेख निष्पादित किया गया था।

6. पहले प्रत्यर्थी ने इस आधार पर मुकदमे में नीलामी की कार्यवाही को चुनौती दी कि एमडीए के पास नीलामी की गई भूमि के केवल 200 वर्ग मीटर (यानी गाटा संख्या 200/2) की भूमि पर हक था और इस प्रकार 400 वर्ग मीटर की शेष भूमि की बिक्री 22 जून 1993 को पहले प्रत्यर्थी के पक्ष में ज़ाहिद हुसैन द्वारा निष्पादित बिक्री विलेख के मद्देनजर अकृत और शून्य थी। मुकदमे में, जैसा कि मूल रूप से संस्थित किया गया था, मांगी गई राहतें निम्न थीं:

(i) यह उद्घोषणा कि एमडीए द्वारा 400 वर्ग मीटर की भूमि की नीलामी अवैध और शून्य है;

(ii) अपीलकर्ता के पक्ष में वादग्रस्त भूमि को हस्तांतरित करने और पहले प्रत्यर्थी को बेकब्जा करने से एमडीए को प्रतिबंधित करने के लिए एक स्थायी निषेधाज्ञा। वादपत्र में यथा उल्लिखित वादग्रस्त भूमि के विवरण इस प्रकार थे:

> "वादग्रस्त भूमि का विवरण
>
> ग्राम सोनकपुर, शहर और जिला मुरादाबाद में स्थित पूर्ववर्ती एकीकृत गाटा संख्या 200 का एक हिस्सा गाटा संख्या 200/1 की 400 वर्ग मीटर भूमि।"

वादपत्र को यह माँगने के लिए संशोधित किया गया था:

(i) यह उद्घोषणा कि एमडीए द्वारा 660.32 वर्ग मीटर भूमि की नीलामी अवैध और शून्य थी;

(ii) यह उद्घोषणा कि पहला प्रत्यर्थी अनुसूची क में वादग्रस्त भूमि सहित अनुसूची (ख) में विस्तृत वादग्रस्त भूमि का अनन्य मालिक और काबिज है; और

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(iii) प्रथम प्रत्यर्थी को बेकब्जा करने से स्थायी व्यादेश।

7. श्री साई सिद्धि डेवलपर्स को मुकदमे के तीसरे प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनाया गया था। संशोधित वादपत्र में यह दलील है कि ज़ाहिद हुसैन द्वारा पहले प्रत्यर्थी के पक्ष में पहले भूमि हस्तांतरित किया, बाद में 5 मई 1993 को सक्षम प्राधिकारी, मुरादाबाद की अनुमति प्राप्त की थी।संशोधित वादपत्र की अनुसूची (क) और अनुसूची (ख) नीचे दी गई हैंः

"वादग्रस्त भूमि की अनुसूची 'क'

ग्राम सोनकपुर, शहर और जिला मुरादाबाद में स्थित पूर्ववर्ती एकीकृत गाटा संख्या 200 का एक हिस्सा गाटा संख्या 200/1 की 660.32 वर्ग मीटर भूमि जो वर्णमाला BCDE द्वारा संलग्न नक्शा नजरी में दिखायी गयी है।

उपरोक्त गाटा की सीमाएँ निम्नानुसार हैं –पूर्वः पुलिस चौकी

पश्चिमः 12 मीटर चौड़ी सड़क।

उत्तरः कांठ रोड।

दक्षिणः वाणिज्यिक प्लॉट संख्या 7 (वादी की संपत्ति)।

वादग्रस्त भूमि की अनुसूची 'ख'

ग्राम सोनाकपुर, शहर और जिला मुरादाबाद में स्थित पूर्ववर्ती एकीकृत गाटा संख्या 200 का एक हिस्सा गाटा संख्या 200/1 की 1295.04 वर्ग मीटर भूमि जो अक्षर ABCDEF से संलग्न नक्शा नजरी में दिखाया गया है।

उपरोक्त गाटा की सीमाएँ निम्नानुसार हैं–पूर्वः पुलिस चौकी और उसके बाद हाजी कयूम का भूखण्ड़पश्चिमः 12 मीटर चौड़ी सड़क।

उत्तरः कांठ रोड।

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

दक्षिणः प्राण सिंह का भूखंड और भूमि।"

8. एमडीए ने एक लिखित कथन दाखिल किया जिसमें कहा गया था किः

(i) गाटा सं. 200/1 में वादग्रस्त भूमि का कब्जा राज्य सरकार द्वारा भूमि को अधिशेष घोषित किए जाने के बाद लिया गया था और नायब तहसीलदार, सदर, मुरादाबाद व कलेक्टर, मुरादाबाद द्वारा 31 जुलाई 1992 को एमडीए को हस्तांतरित किया गया था। एमडीए का तब से गाटा संख्या 200/1 में वादग्रस्त भूमि पर कब्जा है जब तक कि इसे नीलामी के माध्यम से बेचा नहीं गया था;

(ii) 660.32 वर्ग मीटर का पंजीकृत बिक्री विलेख 20 मार्च 2009 को निष्पादित किया गया था;

(iii) जाहिद हुसैन के खिलाफ सीलिंग की कार्यवाही समाप्त हो गई थी और इस प्रकार, वह निरसन अधिनियम के तहत लाभ प्राप्त करने का हकदार नहीं है;

(iv) सक्षम प्राधिकारी, शहरी अधिकत्तम सीमा, मुरादाबाद द्वारा गाटा संख्या 200/1 की वादग्रस्त भूमि के हस्तांतरण के लिए जाहिद हुसैन को कोई अनुमति नहीं दी गई थी;

(v) एमडीए द्वारा 31 जुलाई 1992 को कब्जा लेने के बाद जाहिद हुसैन और पहले प्रत्यर्थी के बीच निष्पादित बिक्री विलेख अमान्य है; और

(vi) उत्तर प्रदेश राज्य और सीलिंग प्राधिकरण आवश्यक पक्षकार थे, लेकिन उन्हें मुकदमे में पक्षकार नहीं बनाया गया था।

9. अपीलकर्ता (विचारण न्यायालय के समक्ष प्रतिवादी संख्या 2) ने एक लिखित कथन दाखिल किया जिसमें कहा गया था किः

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(i) यूएलसीआरए की धारा 10(3) के तहत पूरी वादग्रस्त भूमि राज्य सरकार में निहित थी;

(ii) प्रथम प्रत्यर्थी के पक्ष में ज़ाहिद हुसैन द्वारा दिनांक 22 जून 1993 की बिक्री विलेख शून्य था क्योंकि वह कोई संव्यवहार नहीं कर सकता था जब भूमि सक्षम प्राधिकारी, शहरी भूमि अधिकत्तम सीमा द्वारा अधिनिर्णय के अधीन थी;

(iii) भूमि को 31 जुलाई 1992 को एमडीए को हस्तांतरित करने का आरोप लगाया गया था और 22 जून 1993 को पहले प्रत्यर्थी–वादी को कथित रूप से निष्पादित कोई भी बिक्री विलेख क्रेता को कोई हक प्रदान नहीं करेगा;

(iv) सक्षम प्राधिकारी के आदेश के विरुद्ध जिला न्यायाधीश के समक्ष राजस्व अपील का निस्तारण एमडीए को पक्षकार बनाये बिना नहीं किया जा सकता था;

(v) चूंकि निरसन अधिनियम के प्रवर्तन से पहले (सक्षम प्राधिकारी, शहरी भूमि अधिकत्तम सीमा के 31 जुलाई 1992 के संचार के अनुसार) एमडीए का भूमि पर कब्जा था, इसलिए निरसन का कोई परिणाम नहीं होगा और

(vi) वादी–पहले प्रतिवादी का एमडीए द्वारा 660.32 वर्ग मीटर की भूमि की नीलामी से कोई सरोकार नहीं था, जिसके लिए नीलामी में 65.75 लाख रुपये का भुगतान किया गया था।

10. मुकदमें में निम्नलिखित विवाद्यक तय किए गए थेः

> "1. क्या वादी वादग्रस्त भूमियों का मालिक और कब्जेदार है?
>
> 2. क्या प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा 12.9.2008 को प्रतिवादी संख्या 2 के पक्ष में शुरू की गई नीलामी की कार्यवाही 660.32 वर्ग मीटर की विवादित हद तक अवैध और शून्य है?

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

3. क्या वाद का कम मूल्यांकन किया गया है?

4. क्या न्यायालय–शुल्क घाटा का भुगतान किया गया है?

5. क्या आवश्यक पक्षकारों के कुसंयोजन के कारण वादी का मुकदमा खराब है?

6. क्या इस न्यायालय के पास इस वाद को सुनने के लिए कोई क्षेत्राधिकार नहीं है?

7. क्या वादी के पक्ष में कोई वाद हेतूक उत्पन्न हुआ है?

8. अनुतोष।"

11. 18 अक्तूबर, 2011 के अपने निर्णय द्वारा, विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उसके पास घोषणात्मक और व्यादेशात्मक अनुतोष देने की अधिकारिता है और इसलिए यह वाद पोषणीय था। विचारण न्यायालय ने यह कहते हुए मुकदमा खारिज कर दिया कि एमडीए भूमि का वैध मालिक था और 12 सितंबर 2008 को आयोजित नीलामी वैध थी। विचारण न्यायाधीश ने निम्नलिखित निष्कर्ष दिए:

(i) ज़ाहिद हुसैन, जिला मुरादाबाद के ग्राम सोनकपुर में स्थित 1295.04 वर्ग मीटर के गाटा नंबर 200 के पूर्व मालिक थे;

(ii) यूएलसीआरए के तहत सीलिंग प्रकरण संख्या 437/5325 में सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित 16 मार्च 1988 के एक आदेश द्वारा, 6960.84 वर्ग मीटर भूमि में से कुल 2,000 वर्ग मीटर भूमि को धारण रखने योग्य घोषित किया गया था, जबकि शेष 4960.84 वर्ग मीटर को अधिशेष घोषित किया गया था;

(iii) गाटा संख्या 200 में 1295.04 वर्ग मीटर की भूमि को 'अतिरिक्त खाली भूमि' पाया गया।

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(iv) ग्राम सोनकपुर में गाटा सं. 200 में से 1295.04 वर्ग मीटर का कब्ज़ा नायब तहसीलदार शहरी भूमि अधिकत्तम सीमा, मुरादाबाद द्वारा जिला कलेक्टर की ओर से 31 जुलाई 1992 को एमडीए के नायब तहसीलदार को सौंप दिया गया था। जब जिला न्यायाधीश, मुरादाबाद के समक्ष 16 मार्च 1988 के आदेश के खिलाफ अपील दायर की गई, तो यह तथ्य कि वादग्रस्त भूमि का कब्जा एमडीए को सौंप दिया गया था, अदालत के ध्यान में नहीं लाया गया था। किसी भी घटना में, संशोधित मास्टर प्लान को ध्यान में रखने के लिए मामले को सक्षम प्राधिकारी को भेज दिया गया था। इस बीच, जिला न्यायाधीश के आदेश से पहले, गाटा संख्या 200 के 1295.04 वर्ग मीटर का कब्जा 31 जुलाई 1992 को एमडीए को सौंप दिया गया था, जिसके अनुसरण में यह गाटा संख्या 200 में पूर्वोक्त भूमि का विधिक स्वामी था;

(v) ज़ाहिद हुसैन, जिस पर आरोप है कि उसने पहले प्रत्यर्थी–वादी को जमीन बेची थी, न्यायालय के समक्ष नहीं आया था और न ही 22 जून 1993 को निष्पादित मूल बिक्री विलेख न्यायालय में दाखिल किया गया था। बिक्री विलेख की केवल एक प्रमाणित प्रति दाखिल की गई थी;

(vi) एमडीए, जिसे 31 जुलाई 1992 को भूमि सौंपी गई थी, जिला न्यायाधीश के समक्ष राजस्व अपील का पक्षकार नहीं था और न ही सक्षम प्राधिकारी ने 15 जून 2001 के अपने आदेश में सीलिंग मामले में कार्यवाही को समाप्त करते हुए निर्देश दिया था कि जाहिद हुसैन को 'कब्जा' बहाल किया जाना चाहिए;

(vii) कब्जे को पहले ही 31 जुलाई 1992 को एमडीए को हस्तांतरित कर दिया गया था और अधिग्रहण निरसन अधिनियम द्वारा प्रभावित नहीं होगा क्योंकि भूमि यूएलसीआरए की धारा 10(3) के तहत निहित थी और राज्य सरकार द्वारा

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

विधिवत अधिकृत व्यक्ति द्वारा कब्जा कर लिया गया था (निरसन अधिनियम की धारा 3(1)(क));

(viii) पहले प्रत्यर्थी के अनुसार, ज़ाहिद हुसैन ने 5 मई 1993 को गाटा संख्या 200/1 की 1295.04 वर्ग मीटर भूमि को बेचने की अनुमति प्राप्त की थी।पूरी कार्यवाही मनगढ़ंत प्रतीत होती है क्योंकि ज़ाहिद हुसैन अब गाटा संख्या 200/1 के 1295.04 वर्ग मीटर के मालिक नहीं थे। गाटा संख्या 200 का कब्जा 31 जुलाई 1992 को एमडीए को हस्तांतरित कर दिया गया था। इसके अलावा, 5 मई 1993 को ज़ाहिद हुसैन को भूमि बेचने के लिए जो अनुमति दी गई थी, वह उस भूमि के संबंध में नहीं थी जिसे अधिशेष घोषित किया गया था, बल्कि केवल 2000 वर्ग मीटर की उसकी स्वयं की भूमि के संबंध में थी, जिसमें गाटा संख्या 200/1 में की भूमि शामिल नहीं थी; और

(ix) चूंकि वादग्रस्त भूमि के संबंध में यूएलसीआरए की धारा 8(4) के तहत एक आदेश पहले ही पारित किया जा चुका था, इसलिए जाहिद हुसैन को भूमि को हस्तांतरित करने का कोई अधिकार नहीं था (**रितेश तिवारी और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[4] में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के अनुसार)।

12. उच्च न्यायालय ने 22 फरवरी 2018 के अपने निर्णय द्वारा विचारण न्यायालय की निर्णय और डिक्री को उलट दिया। उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच ने अपील की अनुमति देते हुए कहा किः

(i) सक्षम प्राधिकारी के दिनांक 16 मार्च 1988 के आदेश के विरुद्ध, जिला न्यायाधीश, मुरादाबाद ने 6 जनवरी 1993 को अपील को अनुमति प्रदान की

4. 2011 (84) एएलआर 292 (एससी)

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

और सक्षम प्राधिकारी को संशोधित मास्टर प्लान को ध्यान में रखते हुए मामले को नए सिरे से तय करने का निर्देश दिया गया;

(ii) इस बीच, 27 सितंबर 1988 को यूएलसीएलआरए की धारा 10(1) के तहत राज्य में अधिशेष भूमि निहित करने के लिए एक अधिसूचना जारी की गई थी, जिसमें गाटा संख्या 200 की 1295.04 वर्ग मीटर भूमि शामिल थी।

(iii) अभिलेख पर इसके संबंध में कोई सामग्री नहीं थी कि क्या कोई आगे कार्यवाही की गई थी;

(iv) यह स्पष्ट नहीं था कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा यूएलसीआरए के तहत भूमि मालिक से कब्जा कब लिया गया था;

(v) 31 जुलाई 1992 का पत्र, जो सक्षम प्राधिकारी, शहरी भूमि अधिकत्तम सीमा, मुरादाबाद को संबोधित है, इसमें कहा गया है कि नायब तहसीलदार, शहरी भूमि अधिकत्तम सीमा द्वारा कब्जा सौंप दिया गया था, एमडीए केवल एक "कागजी कब्जा" दिखाने के लिए है न कि यूएलसीआरए[6] की धारा 10(5)[5] या 10(6) के तहत "वास्तविक भौतिक कब्जे" के लिए है। "वास्तविक कब्जा" लेने के लिए, एक पंचनामा बनाकर कब्जा लिया जाना चाहिए था;

(vi) चूंकि 6 मार्च, 1988 के आदेश के विरुद्ध अपील को 6 जनवरी, 1993 को मामले को सक्षम प्राधिकारी को प्रतिप्रेषित करने की अनुमति दी गई थी, इसलिए

---

6. "10(6). यदि कोई व्यक्ति उपधारा (5) के अधीन किए गए आदेश का पालन करने से इनकार करता है या उसका पालन करने में असफल रहता है, तो सक्षम प्राधिकारी खाली भूमि पर कब्जा कर सकता है या उसे संबंधित राज्य सरकार या ऐसे राज्य सरकार द्वारा विधिवत प्राधिकृत किसी व्यक्ति को दे सकता है और उस प्रयोजन के लिए ऐसी शक्ति का उपयोग कर सकता है जो आवश्यक हो।"

5. "10 (5). जहां कोई खाली भूमि उप–धारा (3) के तहत राज्य सरकार में निहित है, सक्षम प्राधिकारी, लिखित रूप में नोटिस द्वारा, किसी भी व्यक्ति को, जो उसके कब्जे में हो सकता है, राज्य सरकार या राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में विधिवत अधिकृत किसी भी व्यक्ति को नोटिस तामील होने के तीस दिनों के भीतर आत्मसमर्पण करने या कब्जा परिदत्त करने का आदेश दे सकता है।"

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

भूमि को अधिशेष घोषित करने वाला आदेश अस्तित्व में नहीं रहेगा। इस प्रकार, राज्य में हक के वैध रूप से निहित होने या इसे कब्जे में लेने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। बाद की कार्यवाही अकृत और शून्य हो जाएगी और भूमि जाहिद हुसैन की रहेगी;

(vii) 27 सितंबर 1988 को धारा 10(1) के तहत एक अधिसूचना जारी करने के बाद, यूएलसीआरए की धारा 10(3) के तहत कोई अन्य अधिसूचना प्रकाशित नहीं की गई थी। इसलिए, भूमि के आभासी भौतिक कब्जे और इसके राज्य सरकार में निहित होने का मुद्दा उत्पन्न नहीं होगा।अन्यथा भी , निरसन अधिनियम केवल उन कार्यवाहियों को बचाता है जहां धारा 10(5) (शांतिपूर्ण या स्वैच्छिक) या धारा 10(6) (जबरन कब्जे) के तहत वास्तविक कब्जा लिया गया है और यह आभासी कब्जे पर लागू नहीं होता है;

(viii) एमडीए द्वारा दाखिल लिखित कथन में, 31 जुलाई 1992 के कब्जे के पत्र के अलावा वास्तविक कब्जा लेने का कोई संदर्भ नहीं था , जो केवल एक कागज संव्यवहार था।यहां तक कि यह पत्र एमडीए को कब्जा हस्तांतरित करने का ज्ञापन नहीं है;

(ix) निरसन अधिनियम के प्रवर्तन पर भौतिक रूप से कब्जा लेने और एमडीए को कब्जा सौंपने के अभाव में, गाटा संख्या 200 में शामिल 1295.04 वर्ग मीटर भूमि जाहिद हुसैन की संपत्ति बनी रही; और

(x) यह तथ्य कि धारा 10(5) के तहत कब्जे के लिए कार्यवाही नहीं की गई थी, 15 जून 2001 के सक्षम प्राधिकारी के आदेश में संदर्भित किया गया था।

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

दलीलें

13. अपीलकर्ता की ओर से पेश विद्वान अधिवक्ता श्री वेंकिता सुब्रमण्यम टीआर ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय का निर्णय निम्नलिखित कारणों से त्रुटिपूर्ण है:

(i) वाद चलाने के लिए दीवानी न्यायालय का क्षेत्राधिकार वर्जित था क्योंकि वाद–पत्र के निष्पक्ष पाठन से यह स्पष्ट हो जाएगा कि वाद का उद्देश्य यूएलसीआरए के तहत राज्य सरकार या सक्षम प्राधिकारी को पक्षकार बनाये बिना यूएलसीआरए के तहत कार्यवाही की वैधता को चुनौती देना था;

(ii) 1993 में जाहिद हुसैन से पहले प्रत्यर्थी द्वारा भूमि की खरीद, यूएलसीआरए की धारा 5(3) और धारा 27 के प्रावधानों से प्रभावित है;

(iii) पहले प्रत्यर्थी के पक्ष में बिक्री विलेख शून्य था और इसलिए पहले प्रत्यर्थी द्वारा संस्थित वाद का आधार शून्य हो जाता है;

(iv) वास्तव में, 31 जुलाई 1992 को कब्जा लिया गया और एमडीए को सौंप दिया गया; और

(v) मुकदमें में मूल दावे को बाद में एक संशोधन द्वारा भूमि के एक बड़े क्षेत्र पर दलील देने के लिए विस्तारित किया गया था।

14. दूसरी ओर, पहले प्रत्यर्थी की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनोज स्वरूप ने कहा कि:

(i) मूल रूप से 1986 में, भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1894 के प्रावधानों के तहत गाटा सं. 200 की 200 वर्ग मीटर के क्षेत्र का अधिग्रहण हुआ। परिणामस्वरूप, भूमि के शेष हिस्से को गाटा संख्या 200/1 में 1295.04 और गाटा संख्या 200/2 में 200 वर्ग मीटर में विभाजित किया गया था;

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(ii) यद्यपि सक्षम प्राधिकारी द्वारा 1988 में जिला न्यायाधीश के आदेश दिनांकित 6 जनवरी 1993 द्वारा एक आदेश पारित किया गया था, इस मामले को संशोधित मास्टर प्लान के आधार पर मामले पर पुनर्विचार के लिए सक्षम प्राधिकारी को वापस भेज दिया गया था, और निरसन अधिनियम के अधिनियमन से पहले किसी भी आगे की कार्यवाही के संबंध में कोई सबूत नहीं है;

(iii) वाद की विरचना उचित थी क्योंकि वाद हेतुक उस विज्ञापन के कारण उत्पन्न हुआ था जो एमडीए द्वारा 660 वर्ग मीटर भूमि की नीलामी के लिए 31 अगस्त 2008 को जारी किया गया था, जिसमें गाटा संख्या 200/1 में वादग्रस्त भूमि का एक हिस्सा शामिल था।दूसरे शब्दों में वाद का सीलिंग की कार्यवाही से कोई लेना–देना नहीं था;

(iv) अपीलार्थी के मामले का आधार 31 जुलाई 1992 का कब्जा पत्र है जो एक अंतर–विभागीय संप्रेषण की प्रकृति में है। स्वतंत्र गवाहों के साथ पंचनामा के अभाव में, यह मानना संभव नहीं है कि वास्तविक भौतिक कब्जा लिया गया था;

(v) भले ही 31 जुलाई 1992 के कब्जे के साक्ष्य वाले दस्तावेज को वैध माना जाता है, बाद में 1993 में जिला न्यायाधीश द्वारा एक प्रतिप्रेषण किया गया था जिसके परिणामस्वरूप निरसन की तारीख से पहले राज्य में कुछ निहित नहीं होगा; और

(vi) 27 सितंबर 1988 को धारा 10(1) के तहत एक अधिसूचना जारी करने के बाद, निरसन अधिनियम लागू होने से पहले कब्जा लेने के लिए कोई और कदम उठाए जाने का कोई सबूत नहीं है।

विश्लेषण

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

15. अब विरोधी तर्कों पर विचार किया जाएगा।

16. शुरुआत में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि पहला प्रत्यर्थी 22 जून 1993 को एक पंजीकृत बिक्री विलेख के आधार पर हक का दावा करता है, जिसके तहत जाहिद हुसैन ने कथित रूप से गाटा सं. 200/1 में 1295.04 वर्ग मीटर के क्षेत्र को 5 लाख रुपये के प्रतिफल पर हस्तांतरित किया। बिक्री विलेख 29 मार्च 1993 को यूएलसीआरए की धारा 27 के तहत संपत्ति की बिक्री के लिए मांगी गई अनुमति को संदर्भित करता है, जो कथित रूप से 5 मई 1993 के एक आदेश द्वारा दी गई थी।

17. जाहिद हुसैन द्वारा नियत प्राधिकरण, शहरी भूमि अधिकत्तम सीमा, मुरादाबाद के कार्यालय के समक्ष दाखिल की गई घोषणा भूमि की कुल सीमा 1295.04 वर्ग मीटर के रूप में संदर्भित करती है। हालांकि, जिन जमीनों के संबंध में अनुमति मांगी गई थी, उनके सर्वेक्षण संख्या (या गाटा संख्या) का कोई संदर्भ नहीं है। इसके अलावा, आदेश दिनांकित 5 मई 1993, जो कथित रूप से पहले प्रत्यर्थी को भूमि की बिक्री की अनुमति देता है, उल्लेख करता है कि 29 मार्च 1993 को सोनाकपुर में स्थित गाटा संख्या 200 के 1295.04 वर्ग मीटर की भूमि को अंतरण के लिए उद्घोषणा की गयी थी। हालांकि, उस भूमि के अंतरण की अनुमति नहीं दी गई थी क्योंकि इससे संबंधित एक लंबित मुकदमा था। आदेश में आगे कहा गया है कि 30 मार्च 1993 को जाहिद हुसैन द्वारा एक अन्य आवेदन दिया गया था।जांच करने के बाद, यह पाया गया कि "जाहिद हुसैन की 2000 वर्ग मीटर की संपत्ति से अब 1295.04 वर्ग मीटर की भूमि को अंतरित करने के लिए अनुमति मांगी गई थी।" इसके आधार पर, सक्षम प्राधिकारी ने 5 मई 1993 के अपने आदेश द्वारा 2000 वर्ग मीटर की भूमि से 1295.05 वर्ग मीटर की भूमि के हस्तांतरण की अनुमति दी।इस प्रकार 5 मई

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

1993 के आदेश से संकेत मिलता है कि सक्षम प्राधिकारी ने स्पष्ट रूप से गाटा संख्या 200/1 में स्थित भूमि के हस्तांतरण की अनुमति से इनकार कर दिया था क्योंकि एक लंबित मुकदमा था और केवल जाहिद हुसैन के स्वामित्व वाली 2000 वर्ग मीटर भूमि में से 1295.05 वर्ग मीटर भूमि के लिए अनुमति प्रदान की गयी थी, जो सीलिंग की कार्यवाही का विषय नहीं थी।

18. यूएलसीआरए की धारा 5(3) निम्नलिखित शब्दों में हैः

> "किसी भी राज्य में, जिस पर यह अधिनियम पहली बार लागू होता है और किसी भी राज्य में जो संविधान के अनुच्छेद 252 के खंड (1) के तहत इस अधिनियम को अपनाता है, इस अधिनियम के प्रारंभ होने से ठीक पहले अधिकत्तम सीमा से अधिक खाली भूमि रखने वाला कोई भी व्यक्ति ऐसी किसी भी भूमि या उसके हिस्से को बिक्री, बंधक, उपहार, पट्टे या अन्यथा किसी माध्यम से तब तक स्थानांतरित नहीं करेगा जब तक कि उसने धारा 6 के तहत एक बयान प्रस्तुत नहीं किया है और उसके पास अतिरिक्त खाली भूमि के बारे में अधिसूचना धारा 10 की उप–धारा (1) के तहत प्रकाशित की गई है और इस प्रावधान के उल्लंघन में किए गए ऐसे किसी भी हस्तांतरण को अकृत और शून्य माना जाएगा।"

धारा 27 (1) आगे प्रावधान करती हैः

> "(1) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, किंतु धारा 5 की उपधारा (3) और धारा 10 की उपधारा (4) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, कोई व्यक्ति विक्रय, बंधक, उपहार, दस वर्ष से अधिक की अवधि के लिए पट्टा या अन्यथा किसी माध्यम से, कोई शहरी या शहरीकरण भूमि का कोई भवन (चाहे इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व या पश्चात् निर्मित किया गया हो) या ऐसे प्रवर्तन से या उस तारीख से, जिस पर भवन का निर्माण किया गया है, जो भी पश्चातवर्ती हो, से दस वर्ष की अवधि के लिए

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

ऐसे भवन के किसी भाग मात्र का अंतरण नहीं करेगा , सिवाय सक्षम प्राधिकारी की पूर्व लिखित अनुमति के।"

19. धारा 5 (3) में कहा गया है कि अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले अधिकत्तम सीमा से अधिक भूमि रखने वाला व्यक्ति तब तक भूमि का अंतरण नहीं करेगा जब तक कि (क) भूमि स्वामी ने धारा 6[7] के तहत एक बयान प्रस्तुत नहीं किया है और (ख) सक्षम प्राधिकारी ने धारा 10(1)[8] के तहत अतिरिक्त भूमि से संबंधित अधिसूचना प्रकाशित की है। प्रथम प्रत्यर्थी के पक्ष में जाहिद हुसैन द्वारा कथित अंतरण धारा 5 की उपधारा (3) में निहित निषेध के विपरीत है। यूएलसीआरए की धारा 8(4) के तहत 16 मार्च 1988 के प्रारंभिक आदेश के अनुसार, 27 सितंबर 1988 को यूएलसीआरए की धारा 10(1) के तहत एक अधिसूचना प्रकाशित की गई थी। हालाँकि, जब जिला न्यायाधीश द्वारा आदेश को अपास्त कर दिया गया था और मामले को सक्षम प्राधिकारी को वापस भेज

7"6. (1) इस अधिनियम के प्रारंभ होने पर अधिकतम सीमा से अधिक खाली भूमि रखने वाला प्रत्येक व्यक्ति, ऐसी अवधि के भीतर, जो निर्धारित की जाए, अधिकारिता रखने वाले सक्षम प्राधिकारी के समक्ष एक बयान दाखिल करेगा, जिसमें उसके द्वारा धारित (उसके अधिकार, शीर्षक या उसमें हित सहित), उसके पास (उसके अधिकार, शीर्षक या ब्याज की प्रकृति सहित) स्थान, सीमा, मूल्य और ऐसी अन्य विशेषताएं, जो सभी खाली भूमि और किसी अन्य भूमि के बारे में निर्धारित की जा सकती हैं, जिस पर भवन है, चाहे उसमें निवास हो या न हो, का उल्लेख होगा और उसमें अधिकत्तम सीमा के भीतर खाली भूमि को निर्दिष्ट करना होगा जिसे वह बनाए रखना चाहता है [..] (2) [...]

(क) [...]

(ख) ऐसे किसी राज्य में, जो संविधान के अनुच्छेद 252 के खंड (1) के अधीन इस अधिनियम को अंगीकार करता है, कोई भी व्यक्ति इस अधिनियम के प्रारंभ पर, अधिकतम सीमा से अधिक खाली भूमि रखता है, तब, उपधारा (1) में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, वह ऐसे व्यक्ति पर, जो उसे उप–धारा (1) में संदर्भित बयान दाखिल करने की अपेक्षा करता है, ऐसी अवधि के भीतर, जो सूचना में विनिर्दिष्ट की जाए, नोटिस दे सकेगा।"

8"10. (1) संबंधित व्यक्ति पर धारा 9 के तहत बयान की तामिल के बाद जैसे ही हो सकता है, सक्षम प्राधिकारी अधिकत्तम सीमा से अधिक ऐसे व्यक्ति द्वारा धारित खाली भूमि के विवरण देते हुए एक अधिसूचना देगा और जिसमें कहा जाएगा कि–(i) ऐसी खाली भूमि का अधिग्रहण संबंधित राज्य सरकार द्वारा किया जाना है और (ii) ऐसी खाली भूमि में हितबद्ध सभी व्यक्तियों के दावे व्यक्तिगत रूप से या उनके एजेंटों द्वारा ऐसी भूमि में उनके हितों की प्रकृति का विवरण देते हुए, संबंधित राज्य के आधिकारिक राजपत्र में और ऐसे अन्य तरीके से जो निर्धारित किया जा सकता है, आम जनता की जानकारी के लिए प्रकाशित किया जाएगा।"

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

दिया गया था, धारा 8(4) के तहत कोई और आदेश पारित नहीं किया गया था और परिणामस्वरूप, धारा 10(1) के तहत कोई अधिसूचना प्रकाशित नहीं की गई थी। इस प्रकार, प्रासंगिक समय में, जो कि 6 जनवरी 1993 के आदेश, जब मामले को सक्षम प्राधिकारी को भेज गया और 22 जून 1993 को जब बिक्री विलेख निष्पादित किया गया था, के बीच था तब यूएलसीआरए की धारा 10(1) के तहत कोई अधिसूचना नहीं थी। इस प्रकार, धारा 5(3) के तहत एक वैध अंतरण के लिए दोनों अपेक्षाओं को पूरा नहीं किया गया था। धारा 5(3) के प्रावधानों के उल्लंघन में कोई भी स्थानांतरण अकृत और शून्य होगा।पहले प्रत्यर्थी द्वारा संस्थित वाद जाहिद हुसैन द्वारा अंतरण के आधार पर हक के उसके कथित दावे पर संस्थित किया गया था और मात्र इस आधार पर विफल होने योग्य था।

20. विचारण न्यायालय के निर्णय में इस तथ्य का एक विशिष्ट निष्कर्ष है कि 5 मई 1993 को जाहिद हुसैन को 1295.04 वर्ग मीटर भूमि के हस्तांतरण के लिए जो अनुमति जारी की गई थी, वह 29 मार्च 1993 के पहले के आदेश के संशोधन में थी। अनुमति 2000 वर्ग मीटर भूमि के संबंध में थी जिसे जाहिद हुसैन द्वारा बरकरार रखा गया था। उच्च न्यायालय ने इस तथ्य के निष्कर्ष को बिल्कुल भी संदर्भित नहीं किया है और न ही इस निष्कर्ष को हटाने के लिए कोई ठोस आधार पाया है। इसके अलावा, यह स्पष्ट है, कि सक्षम प्राधिकारी के आदेश दिनांक 16 मार्च 1988 को जिला न्यायाधीश द्वारा 6 जनवरी 1993 को अपील में अपास्त किया गया था और संशोधित मास्टर प्लान के मद्देनजर अतिरिक्त भूमि को नए सिरे से अधिनिर्णीत करने के लिए मामला प्रतिप्रेषित किया गया था। ऐसी अवस्था में, जब मामला प्रतिप्रेषित किया गया था, तो जाहिद हुसैन धारा 5 (3) के प्रावधानों में निहित स्पष्ट वर्जन के संबंध में वादग्रस्त संपत्ति को हस्तांतरित नहीं किया जा सकता था। भूमि का कोई भी अंतरण विधिक रूप से नहीं किया

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

जा सकता था और प्रावधान के उल्लंघन में ऐसा कोई भी अंतरण अकृत और शून्य होगा।

21. उपरोक्त निष्कर्षों के अलावा जो मुकदमे के आधार को नकारते हैं, अपीलकर्ता–प्रतिवादी ने यूएलसीआरए के तहत क्षेत्राधिकार पर रोक को देखते हुए, वर्तमान मुकदमे पर विचार करने के लिए विचारण न्यायालय के अधिकार क्षेत्र पर भी आपत्ति जताई है। अपीलकर्ता ने कहा है कि पहले प्रत्यर्थी ने यूएलसीआरए के तहत या तो उत्तर प्रदेश राज्य या सक्षम प्राधिकारी को पक्षकार बनाये बिना, यूएलसीआरए के तहत कार्यवाही के पूरे विस्तार को विवादित बनाया। शुरुआत में, हम ध्यान देते हैं कि मुकदमे में विचारण न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की कमी का आधार प्रथम स्तर के न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में उठाया गया था। विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता–प्रतिवादी द्वारा इसके क्षेत्राधिकार के प्रयोग पर उठाई गई आपत्ति को खारिज कर दिया, जिसमें कहा गया था कि नीलामी बिक्री के खिलाफ घोषणात्मक अनुतोष और निषेधाज्ञा के लिए मुकदमे पर विचार नहीं किया जा सकता है। उच्च न्यायालय के समक्ष पहले प्रत्यर्थी द्वारा दायर विचारण न्यायालय के निर्णय के खिलाफ अपील में, अपीलकर्ता ने इसके क्षेत्राधिकार के प्रयोग पर विचारण न्यायालय के इस निष्कर्ष के खिलाफ प्रत्याक्षेप दाखिल नहीं किया। अपीलकर्ता ने इस न्यायालय के समक्ष आग्रह किया है कि दीवानी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को यूएलसीआरए के प्रावधानों के तहत विवक्षित रूप से बाहर रखा गया है। सीपीसी के आदेश XLI नियम 22 पर अपीलकर्ता द्वारा यह तर्क देने के लिए अवलम्ब लिया गया है कि जिस पक्षकार के पक्ष में दीवानी अदालत ने मुकदमे में डिक्री दी है, वह अपील में प्रत्याक्षेप दाखिल किए बिना निष्कर्षों के खिलाफ तर्क दे सकता है।

22. आदेश XLI नियम 22(1) निम्नलिखित शब्दों में है:

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

"(1) कोई भी प्रत्यर्थी, यद्यपि उसने डिक्री के किसी भाग के विरूद्ध अपील न की हो, न केवल डिक्री का समर्थन कर सकेगा [बल्कि यह कथन भी कर सकेगा किसी अधीनस्थ न्यायालय में उसके विरूद्ध किसी विवाद्यक की बाबत निणर्य उसके पक्ष में होना चाहिए था और डिक्री के विरूद्ध कोई ऐसा प्रत्याक्षेप भी कर सकेगा] जो वह अपील द्वारा कर सकता था परन्तु यह तब जब कि उसने ऐसा आक्षेप अपील न्यायालय में उस तारीख से एक मास के भीतर जिसको उस पर या उसके प्लीडर पर अपील की सुनवाई के लिए नियत दिन की सूचना की तामील हुई थी, या ऐसे अतिरिक्त समय के भीतर जिसे अनुज्ञात करना अपील न्यायालय ठीक समझे, दाखिल कर दिया हो।

[स्पष्टीकरण– कोई प्रत्यर्थी जो निणर्य में उस न्यायालय के किसी ऐसे निष्कर्ष से व्यथित है, जिस पर डिक्री आधारित है जिसके विरूद्ध अपील की गई है इस नियम के अधीन प्रत्याक्षेप, जहां तक कि वह डिक्री उस निष्कर्ष पर आधारित है, इस बात के होते हुए भी दाखिल कर सकेगा कि न्यायालय के किसी अन्य निष्कर्ष पर जो उस वाद के विनिश्चय के लिए पर्याप्त है विनिश्चय के कारण वह डिक्री पूणर्त: या भागत: उस प्रत्यर्थी के पक्ष में है।]"

आदेश XLI नियम 22 सीपीसी को 1 फरवरी 1977 से प्रभावी सीपीसी संशोधन (1976 का अधिनियम 104) द्वारा संशोधित किया गया था। संशोधन पूर्व और संशोधन के बाद के प्रावधान का पाठ नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया हैः

इसके संशोधन से पहले, आदेश XLI नियम 22	**1976 के अधिनियम 104 द्वारा यथा संशोधित आदेश XLI नियम 22**
22. सुनवाई में प्रत्यर्थी डिक्री के विरूद्ध ऐसे आक्षेप कर सकेगा मानो उसने पृथक अपील की हो– (1) कोई भी प्रत्यर्थी, यद्यपि उसने डिक्री के किसी भाग के विरूद्ध अपील न की हो,	22. सुनवाई में प्रत्यर्थी डिक्री के विरूद्ध ऐसे आक्षेप कर सकेगा मानो उसने पृथक अपील की हो– (1) कोई भी प्रत्यर्थी, यद्यपि उसने डिक्री के किसी भाग के विरूद्ध अपील न की हो, न

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

न केवल अधीनस्थ न्यायालय में उसके विरूद्ध निर्णीत किसी भी आधार पर डिक्री का समथर्न कर सकेगा, बल्कि डिक्री के विरूद्ध कोई ऐसा प्रत्याक्षेप भी कर सकेगा जो वह अपील द्वारा कर सकता था परन्तु यह तब जब कि उसने ऐसा आक्षेप अपील न्यायालय में उस तारीख से एक मास के भीतर जिसको उस पर या उसके प्लीडर पर अपील की सुनवाई के लिए नियत दिन की सूचना की तामील हुई थी, या ऐसे अतिरिक्त समय के भीतर जिसे अनुज्ञात करना अपील न्यायालय ठीक समझे, दाखिल कर दिया हो।	केवल डिक्री का समथर्न कर सकेगा [बल्कि यह कथन भी कर सकेगा किसी अधीनस्थ न्यायालय में उसके विरूद्ध किसी विवाद्यक की बाबत निणर्य उसके पक्ष में होना चाहिए था और डिक्री के विरूद्ध कोई ऐसा प्रत्याक्षेप भी कर सकेगा] जो वह अपील द्वारा कर सकता था परन्तु यह तब जब कि उसने ऐसा आक्षेप अपील न्यायालय में उस तारीख से एक मास के भीतर जिसको उस पर या उसके प्लीडर पर अपील की सुनवाई के लिए नियत दिन की सूचना की तामील हुई थी, या ऐसे अतिरिक्त समय के भीतर जिसे अनुज्ञात करना अपील न्यायालय ठीक समझे, दाखिल कर दिया हो। [स्पष्टीकरण– कोई प्रत्यर्थी जो निणर्य में उस न्यायालय के किसी ऐसे निष्कर्ष से व्यथित है, जिस पर डिक्री आधारित है जिसके विरूद्ध अपील की गई है इस नियम के अधीन प्रत्याक्षेप, जहां तक कि वह डिक्री उस निष्कर्ष पर आधारित है, इस बात के होते हुए भी दाखिल कर सकेगा कि न्यायालय के किसी अन्य निष्कर्ष पर जो उस वाद के विनिश्चय के लिए पर्याप्त है विनिश्चय के कारण वह डिक्री पूणर्त: या भागत: उस प्रत्यर्थी के पक्ष में है।] (प्रभाव वर्धित)

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

23. **बनारसी और अन्य बनाम राम फल**[9] में संशोधन के प्रभाव पर विचार किया गया था, जहां इस न्यायालय ने माना कि 1976 के संशोधन के बाद, प्रत्यर्थी निचली अदालत के 'निष्कर्षों' के खिलाफ प्रत्याक्षेप दाखिल कर सकता था, जबकि पहले प्रत्याक्षेप केवल तभी दाखिल किया जा सकता था जब निचली अदालत का फैसला आंशिक रूप से प्रत्यर्थी के खिलाफ था। न्यायमूर्ति आर.सी. लाहोटी (तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश के रूप में), ने दो न्यायाधीशों की पीठ के लिए बोलते हुए संप्रेक्षित कियाः

> "10–. [...] तीन स्थितियां हो सकती हैंः
>
> (i) आक्षेपित डिक्री आंशिक रूप से अपीलकर्ता के पक्ष में और आंशिक रूप से प्रतिवादी के पक्ष में है।
>
> (ii) डिक्री पूरी तरह से प्रत्यर्थी के पक्ष में है, हालांकि प्रत्यर्थी के खिलाफ एक वाद–बिन्दु तय किया गया है।
>
> (iii) डिक्री पूरी तरह से प्रत्यर्थी के पक्ष में है और सभी विवाद्यकों का उत्तर भी प्रत्यर्थी के पक्ष में दिया गया है, लेकिन निर्णय में कोई निष्कर्ष है जो प्रत्यर्थी के खिलाफ जाता है।
>
> 11. (i) प्रकार के मामले में प्रत्यर्थी के लिए अपील दायर करना या डिक्री के उस भाग के खिलाफ प्रत्याक्षेप लेना आवश्यक था जो उसके खिलाफ है यदि वह इससे छुटकारा पाने का प्रयास करता है हालांकि डिक्री का वह भाग जो उसके पक्ष में है वह बिना किसी प्रत्याक्षेप के समर्थन का हकदार है।कानून संशोधन के बाद भी बना हुआ है। (ii) और (iii) प्रकार के मामलों में सीपीसी के पूर्व–संशोधन ने प्रत्यर्थी को कोई प्रत्याक्षेप लेने का अधिकार नहीं दिया और न ही अनुमति दी क्योंकि वह डिक्री से पीड़ित व्यक्ति नहीं था। **संशोधित सीपीसी के तहत, स्पष्टीकरण के आलोक में पढ़ें, हालांकि अभी भी प्रत्यर्थी के**

---

9. (2003) 9 एससीसी 606

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बंधित प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह उसके विपरीत किसी निष्कर्ष को चुनौती देने के लिए कोई प्रत्याक्षेप ले, क्योंकि डिक्री पूरी तरह से उसके पक्ष में है और वह बिना प्रत्याक्षेप के डिक्री का समर्थन कर सकता है; उप–नियम (1) के पाठ्य में किए गए संशोधन, सपठित नया अंतःस्थापित स्पष्टीकरण, उसे किसी वादबिन्दु का जवाब देते समय या किसी वादबिन्दु से संव्यवहार करने के दौरान उसके खिलाफ दर्ज किए गए निष्कर्ष पर प्रत्याक्षेप लेने का अधिकार देता है। इस तरह के प्रत्याक्षेप करने के लाभ उप–नियम (4) द्वारा दिए गये हैं। मूल अपील को वापस लेने या चूक के लिए खारिज होने के बावजूद, प्रत्यर्थी द्वारा किसी निष्कर्ष पर लिया गया प्रत्याक्षेप अभी भी गुणावगुण के आधार पर अधिनिर्णीत करने के लिए उपलब्ध होगा, जो अनुतोष, गैर–संशोधित सीपीसी के तहत प्रत्यर्थी को उपलब्ध नहीं थे। संशोधन पूर्व युग में, मूल अपील को वापस लेने या चूक के रूप में खारिज होने ने प्रत्यर्थी को प्रत्यर्थी के खिलाफ दर्ज किसी भी निष्कर्ष की शुद्धता या अन्यथा पर सवाल उठाने के लिए अक्षम कर दिया।"

(प्रभाव वर्धित)

24. सीपीसी के आदेश XLI नियम 22(2) में कहा गया है कि "प्रत्याक्षेप" एक ज्ञापन के रूप में दाखिल किया जाएगा और नियम 1 के प्रावधान, जहां तक वे अपील के ज्ञापन के रूप और अंतर्वस्तु से संबंधित हैं, वहां लागू होंगे।" **एस नजीर अहमद बनाम स्टेट बैंक ऑफ मैसूर**[10] में, इस अदालत ने आदेश XLI नियम 22 सीपीसी के तहत की गई आपत्तियों के रूप पर विस्तार से बताया। **नजीर अहमद (उपरोक्त)** में, प्रत्यर्थी ने एक साम्यिक बंधक के प्रवर्तन के लिए मुकदमा दायर किया था। वाद का फैसला करते हुए, विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता–प्रतिवादी के तर्क को खारिज कर दिया और कहा कि वाद सीपीसी के आदेश II नियम 2 द्वारा वर्जित नहीं था। हालांकि, न्यायालय ने परिसीमा के आधार पर

10. (2007) 11 एससीसी 75

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बंधित प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

वाद को खारिज कर दिया।उच्च न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी द्वारा दायर अपील पर, उच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि यद्यपि सीपीसी के आदेश ।। नियम 2 द्वारा वाद वर्जित था, अपीलकर्ता ने प्रत्याक्षेप का ज्ञापन दाखिल करके विचारण न्यायालय के इस निष्कर्ष को चुनौती नहीं दी थी।।इस प्रकार, उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी को अपीलकर्ता के खिलाफ एक डिक्री प्रदान की।जब उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी, तो न्यायमूर्ति पी.के. बालसुब्रमण्यम ने कहा कि आदेश XLI नियम 22 का सहारा लेते समय, प्रत्याक्षेप का एक ज्ञापन दाखिल करना केवल तब आवश्यक है, जब प्रत्यर्थी किसी अनुतोष का दावा करता है जिसे विचारण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था या विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान किए गए अनुतोष के अलावा एक अतिरिक्त अनुतोष चाहता है। न्यायालय ने कहा कि जब अपीलकर्ता केवल निचली अदालत के 'निष्कर्ष' को चुनौती देता है, तो आपत्ति के ज्ञापन को दाखिल करने की आवश्यकता नहीं हैः

> "7. हमारे विचार में, उच्च न्यायालय यह मानने में स्पष्ट रूप से त्रुटिपूर्ण था कि अपीलकर्ता ने संहिता के आदेश 41 नियम 22 के संदर्भ में प्रत्याक्षेप का ज्ञापन दाखिल नहीं किया है, इसलिए विचारण न्यायालय के निष्कर्ष को चुनौती नहीं दे सकता है वह मुकदमा संहिता के आदेश 2 नियम 2 द्वारा वर्जित नहीं था। **अपील में प्रत्यर्थी उसके खिलाफ विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए किसी भी निष्कर्ष को चुनौती देकर भी विचारण न्यायालय के डिक्री का समर्थन करने का हकदार है। विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री का समर्थन करने के लिए, अपील में किसी प्रत्यर्थी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह उसके खिलाफ विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए एक विशेष निष्कर्ष को चुनौती देते हुए प्रत्याक्षेप का एक ज्ञापन दाखिल करे, जब अंतिम डिक्री स्वयं उसके पक्ष में हो। प्रत्याक्षेपों के किसी ज्ञापन की आवश्यकता केवल तभी होती है जब प्रत्यर्थी किसी अनुतोष का दावा करता है जो विचारण न्यायालय द्वारा उसके**

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

खिलाफ थी और इसके अलावा तब जब वह पहले से ही चुनौती के अधीन डिक्री द्वारा दिया गया हो। इसलिए हमें अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है कि उच्च न्यायालय इस आधार पर कार्यवाही करने में त्रुटिपूर्ण था कि अपीलकर्ता ने प्रत्याक्षेपों का ज्ञापन दाखिल नहीं किया है, तो वह विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान किए गए आदेश 2 नियम 2 के रोक पर निष्कर्ष की शुद्धता को चुनौती देने का हकदार नहीं था।"

(प्रभाव वर्धित)

25. आदेश XLI नियम 22 सीपीसी और उपरोक्त प्राधिकारों के संशोधित प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि दो परिवर्तन हैं जो 1976 के संशोधन द्वारा लाए गए थे।पहला, निचली अदालत के 'निष्कर्षों' के खिलाफ आपत्तियों को शामिल करने के लिए एक प्रत्याक्षेप दाखिल करने के दायरे को काफी बढ़ाया गया था; दूसरा, प्रत्याक्षेप करने के विभिन्न रूपों को मान्यता दी गई थी। संशोधन में निष्कर्षों और डिक्रियों को चुनौती देने के लिए प्रत्याक्षेप के विभिन्न रूप प्रस्तुत किए गए थे क्योंकि संशोधन वाक्यांश *"बल्कि यह कथन भी कर सकेगा कि किसी अधीनस्थ न्यायालय में उसके विरूद्ध किसी विवाद्यक की बाबत निणर्य उसके पक्ष में होना चाहिए था"* को अर्द्धविराम द्वारा वाक्यांश *"डिक्री पर कोई आपत्ति भी ले सकता है"* से अलग करता है। इसलिए वाक्य के दो भागों को अलग–अलग रूप से पढ़ा जाना चाहिए।केवल जब डिक्री के एक भाग को प्रत्यर्थी द्वारा चुनौती दी गयी है, तो प्रत्याक्षेप का एक ज्ञापन दायर किया जाना चाहिए।अन्यथा, अपीलीय न्यायालय के समक्ष बिना किसी प्रत्याक्षेप के, प्रथम बार के न्यायालय के प्रतिकूल निष्कर्ष को चुनौती देना पर्याप्त है।

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

26. संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय के समक्ष कार्यवाही के लिए आदेश XLI नियम 22 सीपीसी में सिद्धांत की प्रयोज्यता को संविधान पीठ ने **रमनभाई आशाभाई पटेल बनाम डाभी अजित कुमार फुलसिंजी**[11] के निर्णय में विचार किया था। न्यायमूर्ति जे. आर. मुधोल्कर ने **वशिष्ठ नारायण शर्मा बनाम देव चन्द्र**[12] के मामले में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के निर्णय को अभिखंडित कर दिया जिसमें प्रत्यर्थी के उस तर्क को नामंजूर कर दिया था कि कोई पक्षकार निर्णय का समर्थन करते हुए अपने विरुद्ध 'निष्कर्षों' पर दलील उठा सकता था। यह माना गया कि सीपीसी के आदेश XLI नियम 22 की प्रयोज्यता अनुच्छेद 136 के तहत अपील पर नहीं है। **रमनभाई आशाभाई पटेल (उपरोक्त)** में, इस न्यायालय ने कहा कि सीपीसी के आदेश XLI नियम 22 के प्रावधान सर्वोच्च न्यायालय पर लागू नहीं होते हैं और सर्वोच्च न्यायालय के नियम किसी अनुरूप उपबन्ध का प्रावधान नहीं करते हैं। हालांकि, यह माना गया था कि इस कमी को सीपीसी से पूरा किया जाना चाहिएः

> "18. [...] इसके अलावा हम सोचते हैं कि इसके समक्ष अपील पर विचार करते समय इस न्यायालय के पास उस निर्णय से उत्पन्न होने वाले सभी बिंदुओं पर निर्णय लेने की शक्ति है जिसके खिलाफ अपील की गई है और यहां तक कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश [4] नियम 22 जैसे व्यक्त प्रावधान के अभाव में यह सुनवाई में अपनाई जाने वाली उचित प्रक्रिया को तैयार कर सकती है। **सिविल प्रक्रिया संहिता जैसी सामान्य विधि के प्रावधानों को लागू करने और उन प्रावधानों को अपनाना, जो उपर्युक्त हो, से बेहतर कोई और तरीका नहीं हो सकता है।हम इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर सकते हैं कि आम तौर पर जिस पक्षकार के पक्ष में अपील में निर्णय दिया गया है , उसे अपील करने के लिए विशेष अनुमति नहीं दी जाएगी।इसलिए न्याय के हित के**

---

11. एआईआर 1965 एससी 669.

12 . (1955) 1 एससीआर 509.

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

लिए यह आवश्यक है कि इस न्यायालय को उपयुक्त मामलों में ऐसी स्थिति में रखे गए पक्षकार को अपने पक्ष में निर्णय का समर्थन करने की अनुमति देनी चाहिए, भले ही उस निर्णय में नकारा गया हो।[...]"

(प्रभाव वर्धित)

इस पर विस्तार करते हुए, **जमशेद होर्मुसजी वाडिया बनाम मुंबई पोर्ट**[13] में इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ (न्यायमूर्ति आरसी लाहोटी ने स्वयं और न्यायमूर्ति बृजेश कुमार की ओर से बोलते हुए) संप्रेक्षित कियाः

"35. विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल द्वारा इस न्यायालय के संज्ञान में कुछ निर्णय लाए गए थे, जिसमें इस न्यायालय ने आदेश 41 नियम 22 सीपीसी का संदर्भ दिया है और प्रत्यर्थी को अपील के तहत उसके खिलाफ दर्ज निष्कर्ष या वाद बिन्दु को चुनौती देते हुए डिक्री या निर्णय का समर्थन करने की अनुमति दी है, हालांकि आदेश, निर्णय या डिक्री अन्त में उसके पक्ष में था। उदाहरण के लिए, रमनभाई आशाभाई पटेल [रमनभाई आशाभाई पटेल बनाम डाभी अजितकुमार फुलसिंहजी, एआईआर 1965 एससी 669], उत्तर रेलवे कॉप. क्रेडिट सोसाइटी लिमिटेड [उत्तर रेलवे कॉप. क्रेडिट सोसाइटी लिमिटेड बनाम औद्योगिक न्यायाधिकरण, एआईआर 1967 एससी 1182] और भारत कला भंडार (प्राइवेट) लिमिटेड [भारत कला भंडार (प्राइवेट) लिमिटेड बनाम नगरपालिका समिति, धमनगांव, एआईआर 1966 एससी 249] देखें, विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल सही हैं। लेकिन हम स्पष्ट करना चाहेंगे कि ऐसा इसलिए नहीं किया गया है क्योंकि सीपीसी का आदेश 41 नियम 22, संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत दायर अपीलों पर लागू होता है; बल्कि यह उच्चतर अधिकारिता के न्यायालयों पर लागू न्याय के एक मूलभूत सिद्धांत के कारण है।एक व्यक्ति जो पूरी तरह से निचली अदालत या न्यायाधिकरण के समक्ष सफल हो गया है, वह केवल एक प्रतिकूल निष्कर्ष से या किसी एक वाद बिन्दु पर प्रतिकूल निर्णय के प्रभाव से खुद को मुक्त करने के लिए अपील दायर

13. (2004) 3 एससीसी 214

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

नहीं कर सकता है क्योंकि वह 'पीड़ित व्यक्ति' के अर्थ के तहत आने वाला व्यक्ति नहीं होगा। सामान्य सिद्धांत के रूप में, किसी अपील या पुनरीक्षण में जिस पक्षकार के पास उसके पक्ष में एक आदेश है, वह यह दिखाने का हकदार है कि भले ही आदेश उसके पक्ष में तय किए गए आधार पर अपास्त किए जाने योग्य था, फिर भी अधीनस्थ न्यायालय में उसके खिलाफ तय किए गए किसी अन्य आधार पर निष्कर्ष को पलटते हुए आदेश बरकरार रह सकता है। विधि की यह स्थिति सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41 नियम 22 के सहारे के बिना सामान्य सिद्धांतों पर समर्थित है। नालकथ सैनुद्दीन बनाम कुरिकदन सुलेमान [(2002) 6 एससीसी 1] और बनारसी बनाम राम फाल [(2003) 9 एससीसी 606] में इस न्यायालय के हालिया निर्णय का संदर्भ हो सकता है। इस न्यायालय को पूर्ण क्षेत्राधिकार का न्यायालय होने के नाते, एक बार मामला अपील में आने के बाद कोई भी डिक्री पारित करने और कोई भी आदेश देने की शक्ति होगी जिसे मामले के तथ्यों और प्रयोज्य विधि पर पारित किया या दिया जाना चाहिए। **इस न्यायालय द्वारा इस तरह की शक्ति का प्रयोग अपने क्षेत्राधिकार के आधार पर किया जाता है, न कि आदेश 41 नियम 33 सीपीसी का सहारा लेकर, हालांकि कुछ मामलों में अवलोकन इस आशय के लिए उपलब्ध हैं कि यह न्यायालय आदेश 41 नियम 33 सीपीसी से निगम्य सिद्धांतों पर कार्य कर सकता है। यह जोड़ा जा सकता है कि इस न्यायालय को इस तरह के डिक्री को पारित करने या ऐसा आदेश देने का अधिकार है जो उसके समक्ष लंबित किसी भी हेतुक या मामले में पूर्ण न्याय करने के लिए आवश्यक है।इस न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 142 द्वारा ऐसी अधिकारिता प्रदान की गई है और इस न्यायालय को सिविल प्रक्रिया संहिता के किसी प्रावधान या उसमें से किसी भी सिद्धांत को निकालने की आवश्यकता नहीं है।** हालांकि, फिर भी, व्यापक क्षेत्राधिकार उपलब्ध होने के बावजूद, यह न्यायालय आमतौर पर कोई आदेश, निर्देश या डिक्री नहीं करेगा जो पक्षकार को अपील करने की स्थिति में उससे अधिक नुकसानदेह स्थिति में रखे, जो कि यह अपील नहीं की गई होती तो होती।"

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(प्रभाव वर्धित)

27. उपरोक्त प्राधिकारों के अवलोकन पर, यह स्पष्ट है कि सीपीसी के आदेश XLI नियम 22 में निर्धारित सिद्धांत संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत याचिकाओं पर लागू किया जा सकता है क्योंकि इस न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत न्याय करने के लिए व्यापक शक्तियां हैं।चूंकि सीपीसी के आदेश XLI नियम 22 में सिद्धांत 'पीड़ित पक्षकार' के अलावा अन्य पक्षकार को उसके खिलाफ किए गए किसी प्रतिकूल निष्कर्ष को उठाने का प्रावधान करके न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाता है, यह न्यायालय आदेश XLI नियम 22 सीपीसी का सहारा ले सकती है और निष्कर्षों पर आपत्तियों को अनुमति प्रदान कर सकती है।

28. उपरोक्त से, यह स्थापित किया गया है कि यह आवश्यक नहीं है कि निचली अदालत के प्रतिकूल निष्कर्षों के लिए चुनौती को प्रत्याक्षेप के ज्ञापन के रूप में बनाया जाना चाहिए। वर्तमान मामले में, हम ध्यान देते हैं कि अपीलकर्ता ने इस आधार पर मुकदमा चलाने के लिए विचारण न्यायालय के क्षेत्राधिकार पर आपत्ति जताई थी कि निषेधाज्ञा और घोषणात्मक अनुतोष नहीं दिया जा सकता था। हालांकि विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता के पक्ष में एक डिक्री पारित की थी, लेकिन उसने क्षेत्राधिकार के प्रश्न पर अपीलकर्ता के खिलाफ निर्णय दिया था।इस निष्कर्ष को अपीलकर्ता ने उच्च न्यायालय के समक्ष प्रत्याक्षेप के ज्ञापन के रूप में चुनौती नहीं दी थी। उच्च न्यायालय के निर्णय में यह उल्लेख नहीं है कि अपीलकर्ता या एमडीए द्वारा क्षेत्राधिकार के अभाव की दलील दी गई थी। इस न्यायालय से पहले, अपीलकर्ता ने जवाबी हलफनामा दायर नहीं किया है, उसने उच्च न्यायालय के समक्ष दायर किया था।इस प्रकार, हमारे सामने अभिलेख से जो निष्कर्ष निकलता है, वह यह है कि क्षेत्राधिकार का आधार केवल अपीलकर्ता

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष उठाया गया था, न कि उच्च न्यायालय के समक्ष। वास्तव में, इस न्यायालय को एक ऐसी याचिका पर निर्णय देना होगा, जो हमारे सामने चुनौती में उच्च न्यायालय के निर्णय का हिस्सा नहीं था।

29. अनुच्छेद 136 के तहत एक विशेष अनुमति याचिका में इस न्यायालय के समक्ष उठाए जा रहे नए आधारों के संबंध में, हम ध्यान देते हैं कि सर्वोच्च न्यायालय नियमावली 2013 के आदेश 21 नियम 3(ग) के तहत, एसएलपी को अदालत के समक्ष उन दलीलों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए, जिनके आदेश को चुनौती दी गई है। हालांकि, अदालत की अनुमति से, सुनवाई के समय अतिरिक्त आधार उठाये जा सकते हैं।

30. **भारत कला भंडार (प्रा.) लिमिटेड बनाम नगरपालिका समिति**[14] में, यह न्यायालय एक दीवानी अपील पर विचार कर रहा था, जहां वाद में या उच्च न्यायालय के समक्ष अपील के आधार में कोई तर्क उठाया नहीं गया था और पहली बार इस न्यायालय के समक्ष उठाया गया था। यद्यपि न्यायालय ने उल्लेख किया कि अपील के दायरे को पक्षकारों के कहने पर बढ़ाया नहीं जा सकता है, यदि कोई दलील व्यापक महत्व का सवाल उठाती है, तो इस न्यायालय द्वारा उस पर विचार किया जा सकता है। इसी तरह के मामले, **वसंत कुमार राधाकिशन वोरा बनाम बम्बई बंदरगाह, न्यासी बोर्ड**[15] में इस न्यायालय ने उल्लेख किया कि विधि के विशुद्ध प्रश्न जो किसी मामले में क्षेत्राधिकार की मूल तक जाते हैं, पहली बार संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपील में उठाए जा सकते हैं।

---

14. एआईआर 1966 एससी 249

15. (1991) 1 एससीसी 761

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

31. **चंद्रिका मिसिर बनाम भैया लाल**[16] में, यह न्यायालय वादग्रस्त संपत्ति पर पक्षकारों के कब्जे के संबंध में एक विशेष अनुमति याचिका पर सुनवाई कर रहा था जो उ.प्र. जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम (1951 का अधिनियम 1) का विषय था। इसको अधिनिर्णीत करते हुए कि क्या मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था, न्यायमूर्ति डीजी पालेकर ने दो न्यायाधीशों की पीठ के लिए बोलते हुए कहा कि दीवानी अदालत के पास मुकदमे पर विचार करने का क्षेत्राधिकार नहीं था। यद्यपि क्षेत्राधिकार पर रोक की दलील अधीनस्थ न्यायालय में नहीं उठाई गई थी, न्यायालय ने कहा किः

> "6. यह इस आदेश से है कि वर्तमान अपील विशेष अनुमति द्वारा दायर की गई है।यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि कब्जे के लिए दीवानी अदालत में मुकदमा दायर किया गया था और परिसीमा अधिनियम वह अधिनियम होगा जो इस तरह के मुकदमे पर शासित होगा।यह मामला नहीं है कि 1951 का यूपी अधिनियम 1, दीवानी न्यायालय में मुकदमा दायर करने को अधिकृत करता है और परिसीमा अधिनियम द्वारा विहित सीमा को अधिरोहित करके कब्जे का अनुतोष देने के लिए परिसीमा की अवधि निर्धारित करता है। इसलिए, यह पूरी तरह से तर्क योग्य था कि यदि वाद दीवानी न्यायालय द्वारा विचार योग्य है तो परिसीमा की अवधि को परिसीमा अधिनियम के प्रावधानों द्वारा शासित किया जाना चाहिए और किसी अन्य द्वारा नहीं।उस मामले में वादियों के पक्ष में कब्जे के लिए एक डिक्री पारित करने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता। **लेकिन पूरे मामले का दुर्भाग्यपूर्ण हिस्सा यह है कि दीवानी न्यायालय के पास मुकदमे पर विचार करने के लिए कोई क्षेत्राधिकार नहीं था। यह सच है कि क्षेत्राधिकार के संबंध में इस तरह के तर्क को विचारण न्यायालय में प्रतिवादी द्वारा नहीं उठाया गया था, लेकिन जहां न्यायालय के क्षेत्राधिकार में स्वाभाविक रूप से कमी है, किसी भी स्तर पर और यहां तक कि निष्पादन की कार्यवाही में भी इस आधार पर दलील उठायी जा सकती है कि डिक्री शून्य थी और यह श्री योगेश्वर प्रसाद**

16. (1973) 2 एससीसी 474

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

द्वारा स्वीकार किया गया है। यदि कोई 1951 के उ.प्र. अधिनियम 1 की धारा 209 और 331 को एक साथ पढ़ता है, तो यह पता चलता है कि हमारे समक्ष जैसे मामलों को परिसीमा अवधि के भीतर विशेषकर अधिनियम के तहत बनाए गए नियमों के तहत विहित, अधिनियम के तहत सृजित विशेष न्यायालय में दायर किया जाना चाहिए और साधारण तरह के दीवानी न्यायालय का क्षेत्राधिकार पूरी तरह वर्जित है।"

(प्रभाव वर्धित)

32. **मोस्ट रेव. पी.एम.ए. मेट्रोपॉलिटन बनाम मोरन मार मारथोमा**[17] में भी, इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने सीपीसी की धारा 9 के तहत मुकदमे की पोषणीयता को संबंध में आपत्ति पर विचार किया, हालांकि इस दलील को अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया था। न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि क्षेत्राधिकार पर रोक या कमी की दलील पर किसी भी स्तर पर विचार किया जा सकता है, क्योंकि क्षेत्राधिकार के बिना पारित कोई आदेश या डिक्री विधि में कोई अस्तित्व नहीं रखता है।

33. संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन दांडिक कार्यवाहियों में भी विधि की इस स्थिति को लगातार लागू किया गया है। **मसलती बनाम उत्तर प्रदेश राज्य**[18] में, उच्च न्यायालय द्वारा कई आरोपी व्यक्तियों की मौत की सजा की पुष्टि को इस अदालत के सामने चुनौती दी गयी थी।मुख्य न्यायाधीश गजेन्द्रगढ़कर ने इस न्यायालय की चार न्यायाधीशों की पीठ के लिए बोलते हुए कहा किः

"11. हम श्री साहनी के इस तर्क को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं कि भले ही यह बिंदु अपीलकर्ताओं द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया था, फिर भी वे हमें इस तथ्य के संबंध में उस बिंदु पर विचार करने के लिए

17. 1995 सप्लीमेंट (4) एससीसी 286

18. एआईआर 1965 एससी 202

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

कहने के हकदार हैं कि 10 व्यक्तियों को फांसी देने का आदेश दिया गया है। **यह माना जा सकता है कि यदि तथ्य का कोई बिंदु जो स्पष्ट रूप से अभिलेख पर उत्पन्न होता है, या विधि का कोई बिंदु जो सुसंगत और तात्विक है और बिना किसी अन्य सबूत के तर्क दिया जा सकता है, विचारण न्यायालय के समक्ष तर्क दिया गया था और इसके द्वारा खारिज कर दिया गया था, उच्च न्यायालय के समक्ष इसे दोहराया नहीं गया था, यह एक उचित मामले में अपीलकर्ताओं को संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपील में इस बिंदु पर विचार करने के लिए इस न्यायालय से कहने के लिए अनुमत हो सकता है; आखिरकार इस प्रकृति की आपराधिक कार्यवाही में जहां अपीलकर्ताओं पर मौत की सजा सुनाई जाती है, केवल इस आधार पर तथ्य व विधि की सुसंगत और तात्विक दलीलों पर विचार करने से इनकार करना उचित नहीं हो सकता है कि उन्हे उच्च न्यायालय के समक्ष उठाया नहीं गया था।** यदि यह दिखाया जाता है कि वास्तव में उच्च न्यायालय के समक्ष दलीलों दी गयी थी और इसके द्वारा विचार नहीं किया गया था, तो निश्चित रूप से, पक्षकार अधिकार स्वरूप इस न्यायालय से उन दलीलों पर निर्णय प्राप्त करने का हकदार है। लेकिन अन्यथा भी अनुच्छेद 136 के तहत अपीलों में इस तरह की दलीलों को उठाए जाने पर रोक लगाने के लिए कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता है।"

(प्रभाव वर्धित)

34. विधि की स्थिति के आधार पर, हम अपीलकर्ता को हमारे समक्ष क्षेत्राधिकार का आधार उठाने की अनुमति देने के लिए इसे न्यायोचित पाते हैं।आधार को उठाने की अनुमति देने के लिए अतिरिक्त सबूत प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं होगी क्योंकि यह कानून का शुद्ध प्रश्न है और मामले के मूल पर प्रहार करता है।अब हम इस तर्क के गुणावगुण की ओर जाएँगे।

35. वाद के अभिकथन दर्शित करते हैं कि पहले प्रत्यर्थी का मामला यह थाः

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(i) ज़ाहिद हुसैन ने 22 जून 1993 को पहले प्रत्यर्थी के पक्ष में भूमि हस्तांतरित करने से पहले 5 मई 1993 को सक्षम प्राधिकारी की अनुमति प्राप्त की थी;

(ii) यूएलसीआरए के तहत सीलिंग कार्यवाही के परिणामस्वरूप सक्षम प्राधिकारी के एक आदेश दिनांक 16 मार्च 1988 द्वारा 1295.04 वर्ग मीटर को अधिशेष घोषित किया गया था, लेकिन सक्षम प्राधिकारी के आदेश को 6 जनवरी 1993 को अपील में अपास्त कर दिया गया था और कार्यवाही को वापस कर दिया गया था;

(iii) निरसन अधिनियम के परिणामस्वरूप, यूएलसीआरए के तहत कार्यवाही समाप्त हो गई; और

(iv) पहला प्रत्यर्थी गाटा संख्या 200/1 के 1295.04 वर्ग मीटर का मालिक बना रहा, जबकि एमडीए गाटा संख्या 200/2 में केवल 200 वर्ग मीटर भूमि का मालिक था।

दूसरे शब्दों में, जिस आधार पर पहले प्रत्यर्थी ने एमडीए द्वारा आयोजित नीलामी की वैधता और निषेधाज्ञा के संबंध में घोषणा की मांग की थी, वह यूएलसीआरए के तहत कार्यवाही का उपशमन था। इस तरह के मुकदमे की पोषणीयता को **शहरी भूमि (अधिकत्तम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 के तहत सक्षम प्राधिकारी, कलकत्ता बनाम डेविड मंतोष**[19] में, इस न्यायालय के दो विद्वान न्यायाधीशों के एक निर्णय में विचार किया गया है। **डेविड मोंटोश** में, न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे और न्यायमूर्ति इंदु मल्होत्रा की खंडपीठ ने विचार किया कि क्या अधिनियम से उत्पन्न मामलों के संबंध में यूएलसीआरए द्वारा दीवानी न्यायालय के क्षेत्राधिकार को अभिव्यक्तः या विवक्षित रूप से बाहर रखा गया था।

19. (2020) 12 एससीसी 542

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

खंडपीठ ने **धुलाभाई बनाम म.प्र. राज्य**[20] के संविधान पीठ के फैसले में प्रतिपादित परीक्षणों का उल्लेख किया और अवधारित कियाः

> "45. तत्कालीन विद्वान मुख्य न्यायाधीश हिदायतुल्लाह ने अपनी अद्वितीय शैली में खंडपीठ के लिए बोलते हुए, उपरोक्त प्रश्न की जांच के लिए परीक्षण निर्धारित किए।ये परीक्षण निम्नानुसार हैंः(धुलाभाई वाद [धुलाभाई बनाम म.प्र. राज्य, एआईआर 1969 एससी 78], एआईआर पृष्ठ 89–90, प्रस्तर 32)
>
> "(1) जहां कानून विशेष न्यायाधिकरणों के आदेशों को अंतिम रूप देता है, तो दीवानी न्यायालयों के क्षेत्राधिकार को बाहर रखा जाना चाहिए यदि दीवानी अदालतें आम तौर पर एक मुकदमे में क्या करेंगी, इसके लिए पर्याप्त उपाय हैं।हालांकि इस तरह के प्रावधान उन मामलों को बाहर नहीं करते हैं जहां विशेष अधिनियम के प्रावधानों का अनुपालन नहीं किया गया है या वैधानिक न्यायाधिकरण ने न्यायिक प्रक्रिया के मूल सिद्धांतों के अनुरूप काम नहीं किया है।
>
> (2) जहां न्यायालय के क्षेत्राधिकार का अभिव्यक्त वर्जन है वहां उपबंधित उपचार की पर्याप्तता का पता लगाने के लिए विशिष्ट अधिनियम की योजना का परीक्षण सुसंगत हो सकेगा किंतु सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार को बनाए रखने के लिए निर्णायक नहीं है। जहां स्पष्ट रूप से बाहर नहीं रखा गया है, अनुतोष का परीक्षण और विशेष अधिनियम की योजना का पता लगाने के लिए अर्थान्वयन(मंतव्य) आवश्यक हो जाता है और जांच का परिणाम निर्णायक हो सकता है। बाद के मामले में यह देखना आवश्यक है कि क्या क़ानून एक विशेष अधिकार या दायित्व बनाता है और अधिकार या दायित्व के निर्धारण के लिए प्रावधान करता है और आगे कहता है कि उक्त अधिकार और देयता के बारे में सभी प्रश्न इस प्रकार गठित

---

20. एआईआर 1969 एससी 78

न्यायाधिकरणों द्वारा निर्धारित किए जाएंगे और क्या सामान्य रूप से सिविल अदालतों में कार्रवाई से जुड़े अनुतोष उक्त क़ानून द्वारा विहित हैं या नहीं।

(3) विशेष अधिनियम के प्रावधानों के अधिकारातीत होने की चुनौती को उस अधिनियम के तहत गठित न्यायाधिकरणों के समक्ष नहीं लाया जा सकता है। यहां तक कि उच्च न्यायालय भी न्यायाधिकरणों के निर्णय में पुनरीक्षण या संदर्भ होने पर, उस प्रश्न में नहीं जा सकता है।

(4) जब किसी प्रावधान को पहले ही असंवैधानिक घोषित किया जाता है या किसी प्रावधान की संवैधानिकता को चुनौती दिया जाना है, तो एक मुकदमा करने का विकल्प खुला होता है। उत्प्रेषण लेख में रिफंड के लिए एक निर्देश हो सकता है यदि दावा स्पष्ट रूप से परिसीमा अधिनियम द्वारा निर्धारित समय के भीतर है, लेकिन यह मुकदमे को प्रतिस्थापित करने के लिए एक अनिवार्य उपाय नहीं है।

((5) एक वाद वहाँ उत्पन्न होता है, जहां विशिष्ट अधिनियम में संवैधानिक सीमाओं से अधिक या अवैध रूप से एकत्र किए गए कर की वापसी के लिए कोई तंत्र नहीं है।

(6) अपनी संवैधानिकता के अलावा मूल्यांकन की शुद्धता के प्रश्न अधिकारियों के निर्णय के लिए हैं और एक दीवानी वाद तब उत्पन्न नहीं होता है यदि अधिकारियों के आदेशों को अंतिम घोषित किया जाता है या विशेष अधिनियम में स्पष्ट निषेध है। दोनों ही मामलों में, विशेष अधिनियम की योजना की जांच की जानी चाहिए क्योंकि यह एक सुसंगत जांच है।

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

(7) दीवानी न्यायालय की अधिकारिता के अपवर्जन का अनुमान तब तक आसानी से नहीं लगाया जा सकता जब तक कि ऊपर निर्धारित शर्तें लागू न हों।"

[...]

47. इस मुद्दे की जांच करने के बाद, हम स्पष्ट रूप से इस विचार पर हैं कि वर्तमान मामला धुलाभाई [धुलाभाई बनाम म.प्र. राज्य, एआईआर 1969 एससी 78] के प्रस्तर 32 के खंड (1) के अंतर्गत आता है और उसमें निर्धारित परीक्षण को संतुष्ट करता है।इसलिए दीवानी न्यायालय के क्षेत्राधिकार को विचाराधीन दीवानी वाद के विचारण के लिए निहितार्थ द्वारा बाहर रखा जाना है। यह हम निम्नलिखित कारणों से कहते हैंः

47.1. पहला, प्रश्नगत अधिनियम अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेशों को अंतिम रूप देता है [धारा 33 (3) देखें]।

47.2. दूसरा, अधिनियम अपीलों की प्रकृति में पर्याप्त उपचार का उपबंध करता है, जैसे कि अधिकरण को प्रथम अपील और उच्च न्यायालय को दूसरी अपील [धारा 12(4), 13 और 33(1) देखें]।

47.3. तीसरा, अधिनियम अपने आप में एक पूर्ण संहिता है और अन्य विधियों पर अध्यारोही शक्तियां प्रदान करता है (धारा 42 देखें)।

47.4. चौथा, अधिनियम धारा 30 और 40 के अधीन आने वाले मामलों के संबंध में दीवानी न्यायालय की अधिकारिता को स्पष्ट रूप से अपवर्जित करता है [धारा 30 (5) और धारा 40 को देखें]।

48. पूर्वोक्त पांच कारणों के आलोक में– निश्चयपूर्वक, अधिनियम के तहत उत्पन्न होने वाले सभी मुद्दों के संबंध में दीवानी न्यायालय के

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

क्षेत्राधिकार को विवक्षित रूप से बाहर रखा गया है, जिससे धुलाभाई [धुलाभाई बनाम म.प्र. राज्य, एआईआर 1969 एससी 78] के प्रस्तर 32 के खंड (1) में निर्धारित सभी शर्तों को पूरा किया जा सके।"

(प्रभाव वर्धित)

इस प्रकार, न्यायालय ने निम्नानुसार निष्कर्ष को संक्षेप में प्रस्तुत किया:

"47.1. पहला, प्रश्नगत अधिनियम अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेशों को अंतिम रूप देता है [धारा 33 (3) देखें]।

47.2. दूसरा, अधिनियम अपीलों की प्रकृति में पर्याप्त उपचार का उपबंध करता है, जैसे कि अधिकरण को प्रथम अपील और उच्च न्यायालय को दूसरी अपील [धारा 12(4), 13 और 33(1) देखें]।

47.3. तीसरा, अधिनियम अपने आप में एक पूर्ण संहिता है और अन्य विधियों पर अध्यारोही शक्तियां प्रदान करता है (धारा 42 देखें)।

47.4. चौथा, अधिनियम धारा 30 और 40 के अधीन आने वाले मामलों के संबंध में दीवानी न्यायालय की अधिकारिता को स्पष्ट रूप से अपवर्जित करता है [धारा 30 (5) और धारा 40 को देखें]।"

36. एमडीए द्वारा नीलामी नोटिस को चुनौती देने की आड़ में, मुकदमें का वास्तविक उद्देश्य संपत्ति की बिक्री के लिए 5 मई 1993 को प्राप्त एक कथित अनुमति, जाहिद हुसैन द्वारा निष्पादित अंतरण के विलेख और यूएलसीआरए के तहत कार्यवाही के उन्मूलन के आधार पर पहले प्रत्यर्थी के हक की पुष्टि करना था। उच्च न्यायालय ने माना है कि 31 जुलाई 1992 को जिस दस्तावेज के आधार पर एमडीए को कब्जा हस्तांतरित किया गया था, वह वास्तविक भौतिक

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बंधित प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

कब्जे का सबूत नहीं देता है, बल्कि केवल एक कागजी संव्यवहार है। उच्च न्यायालय ने माना कि भूमि के मालिक से सक्षम प्राधिकारी द्वारा वास्तविक और भौतिक कब्जे में लिया गया था या नहीं, इस पर कोई सामग्री नहीं है और यह माना गया कि इसके अभाव में, जाहिद हुसैन से खरीददार के रूप में प्रथम प्रत्यर्थी का वैध हक जारी रहेगा। उच्च न्यायालय ने इन निष्कर्षों को इस तथ्य के बावजूद दर्ज किया है कि सोच –समझकर प्रारूपण की प्रक्रिया द्वारा, पहले प्रत्यर्थी ने यूएलसीआरए के तहत कार्यवाही के संबंध में (वाद की पोषणीयता पर रोक को दूर करने के लिए) कोई राहत नहीं मांगी और राज्य या सक्षम प्राधिकारी को पक्षकार नहीं बनाया जो चुनौती का जवाब देने की स्थिति में रहे होगें।

37. उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय दोनों ही यूएलसीआरए से संबंधित मामलों से उत्पन्न वाद का विचारण करने के लिए दीवानी न्यायालय की अधिकारिता से संबंधित मुद्दे का सही मूल्यांकन करने में विफल रहे हैं। पहले प्रत्यर्थी ने वादपत्र को कलात्मक रूप से इस तरह से प्रारूपित करने का प्रयास किया है जिससे यह प्रकट हो सके कि मुद्दा केवल एमडीए द्वारा जारी नीलामी नोटिस से संबंधित है।इस न्यायालय ने समय–समय पर इस प्रकृति के मसौदा तैयार करने के खिलाफ चेतावनी दी है जो कार्रवाई के वास्तविक कारण से ध्यान भंग करना चाहता है। **टी. अरिवदन्दम बनाम टीवी सत्यपाल**[21] में, न्यायमूर्ति वीआर कृष्णा अय्यर ने दो न्यायाधीशों की पीठ के लिए बोलते हुए कहाः

> "5. हमें अदालत की प्रक्रिया का बार–बार घोर दुरूपयोग करने और बिना पछतावे का सहारा लेने के लिए याचिकाकर्ता की निंदा करने में जरा भी संकोच नहीं है।उच्च न्यायालय के फैसले में पाए गए तथ्यों के कथन से , यह पूरी तरह से स्पष्ट है कि अब प्रथम मुंसिफ न्यायालय, बैंगलोर के समक्ष लंबित मुकदमा, वाद–पत्र प्राप्त करने में कानून की दया का एक गंभीर दुरुपयोग है।

21. (1977) 4 एससीसी 467.

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

विद्वान मुंसिफ को यह याद रखना चाहिए कि यदि वादपत्र के अर्थपूर्ण पाठन पर ना कि औपचारिक पाठन पर यह स्पष्ट रूप से संतापकारी और गुणहीन(बिना मेरिट का) है, वाद लाने के स्पष्ट अधिकार को प्रदर्शित न करने के अर्थ में है, तो उसे आदेश 7, नियम 11 सीपीसी के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करना चाहिए, यह देखने के लिए ध्यान देते हुए कि उसमें उल्लिखित आधार पूरा हो गया है। और, यदि चतुराईपूर्ण प्रारूपण ने वाद हेतूक का भ्रम पैदा किया है, तो सीपीसी के आदेश 10 के तहत सत्यता की जाँच करते हुए पक्षकार का परीक्षण करके पहली सुनवाई में ही इसे समाप्त कर देना चाहिए। एक क्रियाशील न्यायाधीश गैर–जिम्मेदार कानून के मुकदमों का जवाब होता है।विचारण न्यायालय पहली सुनवाई में पक्षकार का परीक्षण करने पर अनिवार्य रूप से जोर देगी ताकि फर्जी मुकदमेबाजी को शुरूआती चरण में ही खत्म किया जा सके। [...]"

(प्रभाव वर्धित)

न्यायालय के इस अभ्युक्ति का तब से **मदनुरी श्री राम चंद्र मूर्ति बनाम सैयद जाला**[22]**, सोपन सुखदेव सेबल बनाम असिटेंट चैरिटी कमिश्नर**[23] और हाल ही में हममें से एक (न्यायमूर्ति एम. आर. शाह) द्वारा **राघवेंद्र शरण सिंह बनाम राम प्रसन्ना सिंह (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि**[24] में और **केनरा बैंक बनाम पी. सेलथल और अन्य**[25] में लगातार पालन किया गया है। इसलिए पहले प्रत्यर्थी द्वारा संस्थित मुकदमे पर विचार करने के लिए दीवानी न्यायालय के क्षेत्राधिकार को वर्जित कर दिया गया था।

---

22. (2017) 13 एससीसी 174.

23. (2004) 3 एससीसी 137.

24. एआईआर 2019 एससी 1430.

25. (2020) 13 एससीसी 143

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

38. उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निर्णय के खिलाफ अपील को इस आधार पर अनुमति दी कि जिला न्यायाधीश द्वारा अपील की अनुमति देने और यूएलसीआरए की धारा 8(4) के तहत सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित 16 मार्च 1988 के आदेश को अपास्त करने के बाद, यूएलसीआरए की धारा 8(4) के तहत आदेश के अनुसरण में आगे की सभी कार्यवाहियाँ– राज्य द्वारा कब्जा लेने सहित– शून्य और अकृत हो जाएंगी। तब खंडपीठ ने माना कि तब अन्यथा भी, वादग्रस्त भूमि का केवल 'कागजी कब्जा' लिया गया था और 'वास्तविक कब्जा' नहीं लिया गया था और इस प्रकार इन परिस्थितियों में ज़ाहिद हुसैन के पास वादग्रस्त भूमि का हक और कब्जा दोनों होगा। उच्च न्यायालय के निष्कर्ष परिणाम नहीं देते हैं क्योंकि भले ही ज़ाहिद हुसैन के पास अंतरण के समय वादग्रस्त भूमि का हक और कब्जा था, तो पहले प्रत्यर्थी को कथित अंतरण शून्य और अकृत है। उच्च न्यायालय को इस आधार पर मुकदमा खारिज करने को बरकरार रखना चाहिए था।एक वादी को अपने पैरों पर खड़ा होना पड़ता है और प्रत्यर्थी–वादी के पास कानून में कोई वैध हक या हित नहीं था जिसके आधार पर मुकदमा संस्थित किया जा सकता था।जब कथित अंतरण अमान्य था तो प्रत्यर्थी–वादी के पास अपीलकर्ता के पक्ष में एमडीए द्वारा नीलामी को चुनौती देने के लिए कोई वाद–हेतुक नहीं था।

39. हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि पहले प्रत्यर्थी द्वारा संस्थित मुकदमे को खारिज किया जाना था।लेकिन निम्नलिखित कारणों से, विचारण न्यायाधीश का मुकदमे को खारिज करने का निर्णय सही था।

(i) प्रथम प्रत्यर्थी को जाहिद हुसैन द्वारा वाद भूमि का कथित अंतरण निरसन अधिनियम अधिनियमित किए जाने से पहले था।यूएलसीआरए की धारा 5(3) के तहत निर्धारित दोहरी शर्तों को अंतरण से पहले पूरा नहीं किया गया था क्योंकि

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

धारा 6 के तहत कथन प्रस्तुत नहीं किया गया था और सक्षम प्राधिकारी ने यूएलसीआरए की धारा 10(1) के तहत एक अधिसूचना जारी नहीं की थी (जो उस समय लागू थी)। इसलिए, भले ही ज़ाहिद हुसैन के पास वादग्रस्त भूमि का स्वत्व था, पहले प्रत्यर्थी को अंतरण यूएलसीआरए की धारा 5(3) के तहत शून्य और अवैध था;

(ii) जब ज़ाहिद हुसैन ने वादग्रस्त भूमि के अंतरण की अनुमति मांगते हुए एक घोषणा दायर की थी, तो यूएलसीआरए की धारा 27 के तहत अनुमति नहीं दी गई थी क्योंकि उक्त भूमि के संबंध में एक मुकदमा लंबित था। इसके बाद उन्होंने एक और आवेदन दायर किया जिसमें उसके द्वारा धारित 2000 वर्ग मीटर भूमि में से 1295 वर्ग मीटर भूमि के अंतरण की अनुमति मांगी गई थी। 5 मई 1993 को सक्षम प्राधिकारी के कार्यालय द्वारा यूएलसीआरए की धारा 27 के तहत जो अनुमति दी गई थी, वह उसके द्वारा धारित संपत्ति से भूमि के अंतरण के लिए थी न कि वादग्रस्त भूमि के लिए थी;

(iii) वादी–पहले प्रत्यर्थी ने नीलामी की वैधता को चुनौती देने के लिए कलात्मक रूप से वादपत्र तैयार किया है और निषेधाज्ञा और उद्घोषणा की मांग की है, जबकि मुकदमें का वाद–हेतुक भूमि की सीलिंग की कार्यवाही से उत्पन्न होता है;

(iv) यूएलसीआरए विवक्षित रूप से सीलिंग की कार्यवाही से उत्पन्न मामलों पर दीवानी न्यायालय के क्षेत्राधिकार को बाहर करता है; और

(v) यद्यपि अपीलकर्ता ने आदेश XLI नियम 22 सीपीसी के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष क्षेत्राधिकार के मुद्दे पर विचारण न्यायालय के निष्कर्ष को या तो प्रत्याक्षेप का ज्ञापन दाखिल करके या अन्यथा किसी और तरीके से चुनौती नहीं

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

दी थी, लेकिन उसे इस न्यायालय के समक्ष तर्क उठाने से नहीं रोका गया है। यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपनी विस्तृत अधिकारिता सपठित अनुच्छेद 142 के अधीन पूर्ण न्याय करने की अपनी शक्ति के मद्देनजर, पहली बार उठाए गए नए आधारों पर विचार कर सकता है यदि इसमें कानून का प्रश्न शामिल है जिसमें अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत की आवश्यकता नहीं है , विशेष रूप से न्यायालय की अधिकारिता से संबंधित मामलों में, जो मामले की जड़ (मूल) तक जाते हैं।

40. तदनुसार हम अपील को अनुमति प्रदान करते हैं और 22 फरवरी 2018 के उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को अपास्त करते हैं। पहले प्रत्यर्थी द्वारा संस्थित वाद खारिज हो जाएंगे। पहला प्रत्यर्थी अपीलकर्ता को पचास हजार रुपये की लागत का भुगतान करेगा।

.....

[न्यायमूर्ति डॉ धनंजय वाई चंद्रचूड़]

.....

[न्यायमूर्ति एम.आर. शाह]

नई दिल्ली;

उद्घोषणा

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।

5 अगस्त 2021.

<u>उद्घोषणा</u>

"क्षेत्रीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के अपनी भाषा में समझने हेतु निर्बिंधत प्रयोग के लिये है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और सरकारी उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक माना जायेगा तथा निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्यों के लिये मान्य होगा"।